वैज्ञानिक मनोवृत्ति

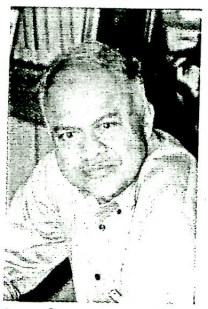

□ जयंत विष्णु नार्लीकर
ई-मेल: jayant@iucaa.ernet.in

प्रस्तावना

मैंने कुछ साल पहले इक्कीसवीं सदी में मानव को जिन मुद्दों का सामना करना पड़ेगा, उन पर केंद्रित एक अंतर्राष्ट्रीय और अंतर-विषयक सम्मेलन में भाग लिया। स्वाभाविक है कि वैश्विक पर्यावरण, जनसंख्या नियंत्रण, खाद्य उपलब्धता, संचार, शिक्षा, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी आदि जैसे मुद्दे प्रमुख थे। जैसे-जैसे वक्ता सम्मेलन के विषय से संबंधित विविध बिंदुओं पर वक्तव्य देते गए, वहीं मेरी हालत शानदार दावत में नमकदानी जैसी एक छोटी मगर महत्वपूर्ण चीज खोजने के समान हो गई। वैज्ञानिक मनोवृति वही चुटकी भर नमक है जो वर्तमान व भविष्य की चुनौतियों का सामना करने में मनुष्य के मानसिक सोच का आवश्यक तत्व होता है।

वैज्ञानिक मनोवृति क्या है? इसकी प्रासंगिकता पहले की तुलना में अब क्यों अधिक अनुभव की जा रही है। क्या यह एक व्यक्तिगत विशेषता है या फिर समाज, संस्कृति और सभ्यताओं से भी इसका सरोकार है? आज यह किस सीमा तक प्रचलित है? इसे और भी अधिक बढ़ाने के लिए क्या किया जा सकता है? ये कुछ प्रश्न हैं, मैं जिनके जवाब देने का प्रयास करूंगा। लेकिन, इसके महत्व को पंडित जवाहर लाल नेहरु ने बेहद प्रभावी ढंग से अभिव्यक्त किया है :

> ... विज्ञान एवं आधुनिक विश्व के प्रभाव ने तथ्यों के महत्व को बढ़ावा दिया, विश्लेषणात्मक दृष्टि बढ़ाई, प्रमाणों के सत्यापन पर बल दिया और परंपरा को केवल परंपरा के रूप में स्वीकार करने को नकारा...
>
> लेकिन आज भी यह अजीब लगता है कि हम परंपराओं से अभिभूत हो जाते हैं और बुद्धिमान मनुष्यों तक की विश्लेषणात्मक बुद्धि काम करना बंद कर देती है... केवल राजनैतिक और आर्थिक रूप से स्वतंत्र होने पर ही हमारा मस्तिष्क सामान्य और आलोचनात्मक रूप से कार्य करता है।
>
> *(...डिस्कवरी ऑफ इंडिया)*

ये पंक्तियां ब्रिटिश हुकुमत के दौरान लिखी गई थीं। आज हम आजाद भारत में रहते हैं जो आर्थिक समृद्धि की ओर बढ़ रहा है। फिर भी अभी हम उस वैज्ञानिक दृष्टिकोण की पहुंच से दूर हैं जिसे हमारी भावी खुशहाली के लिए नेहरु ने जरूरी माना था। वैज्ञानिक दृष्टिकोण की अच्छाइयों को जानने से पहले आइए देखें कि स्वयं विज्ञान का कार्य कैसे होता है।

विज्ञान विधि

विज्ञान की प्रगति के तीन चरण होते हैं : प्रयोग और प्रेक्षण, सैद्धांतिक व्याख्या और नए निष्कर्षों का पूर्वानुमान। यह क्रम अंतहीन होता है। प्रयोग प्रयोगशाला में किए जाते हैं या किसी प्राकृतिक घटना का अवलोकन किया जाता है और तब एक सैद्धांतिक परिपाटी में उसकी व्याख्या की जाती है। अगर इस प्रयास में कामयाबी मिल जाती हैं तो वैज्ञानिक नए पूर्वानुमान लगता है जिसे भविष्य में प्रयोगों अथवा अवलोकनों द्वारा सत्यापित किया जाएगा। यदि उस सिद्धांत की सफलता जारी रहती है तो लोग उस पर विश्वास करने लगते हैं। *फिर भी किसी भी सिद्धांत के निर्विवाद रूप से सत्य होने का दावा नहीं किया जा सकता।* हर सिद्धांत के साथ इस बात की संभावना हमेशा बनी रहती है कि भविष्य का कोई प्रयोग उस सिद्धांत के पूर्वानुमानों से असहमति जता सकता है। उस दशा में पुराने सिद्धांत का परित्याग या परिवर्तन किया जाएगा अथवा एक नया और बेहतर सिद्धांत उसका स्थान लेगा। न्यूटन का गुरुत्वाकर्षण नियम तब तक सफलतापूर्वक जारी रहा जब तक सौरमंडल से संबंधित कुछ परिष्कृत परीक्षणों ने इस नियम की कुछ कमियों को प्रकट नहीं कर दिया और अंततः आइंस्टाइन के आपेक्षिकता सिद्धांत ने इसका स्थान लिया। इस संदर्भ में सुप्रसिद्ध खगोलवैज्ञानिक सर हरमन बोंडी की टिप्पणी उल्लेखनीय है:

> ...एक वैज्ञानिक के लिए विज्ञान के क्षेत्र में किसी सिद्धांत के बारे में विचार करना आवश्यक है। इस प्रक्रिया को यांत्रिक रूप नहीं दिया जा सकता। किसी वैज्ञानिक कारखाने में इसके विश्लेषण का कोई विकल्प नहीं है। इसे हमेशा मानवीय परिकल्पना की आवश्यकता होती है। और वास्तव में, विज्ञान के क्षेत्र में हम सृजनशीलता और मौलिकता को सर्वोच्च सम्मान प्रदान करते हैं। यह स्पष्ट है कि प्रत्येक सिद्धांत खतरों के साथ जीता है तथा इसकी मृत्युदर काफी अधिक होती है। इसलिए हम वैज्ञानिकों को सही होने के कारण सम्मान नहीं देते, किसी को भी हमेशा सही होने के लिए यह कभी नहीं दिया जाता है। हम वैज्ञानिकों का सम्मान उनकी मौलिकता, प्रेरणशीलता और उनके संपूर्ण कार्य के लिए करते हैं। विज्ञान सर्वोत्कृष्ट मानवीय प्रयत्न होता है क्योंकि यह आपसी सहयोग, एक-दूसरे के कार्य परीक्षण और परस्पर मानवीय ध्यानाकर्षण पर निर्भर करता है।
>
> *(कॉस्मोलॉजी नाउ, संपा.* एल. जॉन, 1973, बी.बी.सी. पब्लिकेशंस)

बोंडी की टिप्पणी में एक स्पष्टीकरण की आवश्यकता है। इसका अर्थ यह नहीं है कि कोई भी ऐरा, गैरा, नत्थूखैरा न्यूटन या आइंस्टाइन से भी बेहतर नए विचार प्रस्तुत करने का दावा कर सकते हैं। मुझे इस प्रकार के विचार दर्जनों लोगों से मिलते रहते हैं जो केवल कल्पना की उड़ान होते हैं और उनका कोई प्रामाणिक आधार नहीं होता। बोंडी की टिप्पणी का निहितार्थ यह है कि विचारों को परिशुद्ध गणित के साथ सावधानीपूर्वक हल और भौतिक तथ्यों द्वारा सत्यापित किया जाता है। वास्तव में सत्य का कोई सरल मार्ग नहीं होता, भले ही वह कैसा भी हो। हमारे समाज ने प्रकृति को जितना भी समझा है और उसके बल पर बेहतर ज्ञान की ओर बढ़ा है, उस सबको संजोने का धैर्य चाहिए।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास विज्ञान के इस प्रकार के अभ्यास से हुआ है: यह ऐसे तथ्यपूर्ण प्रमाण और वर्णनों पर निर्भर करता है जिन्हें स्थापित सत्य के विपरीत परखा जा सकता है। यह तथ्यात्मकता पर जोर देता है यानी तथ्यों की कसौटी पर अगर कोई उदाहरण खरा नहीं उतरता तो उसे छोड़ कर तथ्यपरक उदाहरण को अपनाया जा सकता है। लेकिन वैज्ञानिक दृष्टिकोण केवल वैज्ञानिक का विशेषाधिकार नहीं होता। आखिरकार इसकी उत्पत्ति प्रकृति के बारे में मानवीय यानी हम सबकी जिज्ञासा से होती है। फिर हम चाहे वैज्ञानिक हों या नहीं, हमें इसका हक है। विज्ञान की ही तरह प्रगति केवल तभी हासिल की जा सकती है जब स्वभाविक रुढ़िवादिता पर वैज्ञानिक दृष्टिकोण हावी हो जाए। इस प्रकार मानव समाज में यह दृष्टिकोण पूर्वाग्रह और अंधविश्वासों जैसी बुराइयों को दूर करता है।

विज्ञान और ज्योतिष

प्राकृतिक प्रक्रियाओं का ज्ञान न होने के कारण अंधविश्वास जन्म लेते हैं। विज्ञान प्रकृति के रहस्यों का अनावरण करने के लिए समर्पित होता है। जैसे ही किसी रहस्य विशेष का समाधान हो जाता है तो हमें इससे जुड़े अंधविश्वासों के समाप्त होने की अपेक्षा करनी चाहिए। फिर भी आम मनुष्यों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण की कमी के कारण हमेशा ऐसा नहीं होता। मैं यहां एक उदाहरण देता हूं।

प्रारंभिक मानव समाज ग्रहों की रहस्यमय शक्तियों पर विश्वास करते थे। ग्रह क्या हैं और वे कैसे घूमते हैं, इस बारे में अनभिज्ञता के कारण उनकी यह अवधारणा बनी। अब खगोलविज्ञान ने आदिमानव

द्वारा ग्रहों के बारे में उठाए गए सभी सवालों के जवाब दे दिए हैं, इसलिए हमें इस अवधारणा के निराधार होने की अपेक्षा करनी चाहिए। लेकिन, अभी यह हो नहीं पाया है। यहां तक कि तकनीकी रुप से विकसित देशों के शिक्षित वर्गों में भी यह विश्वास बना हुआ है। सन् 1970 के दशक के मध्य में प्रमुख वैज्ञानिकों के एक दल ने, जिसमें पश्चिमी देशों के अनेक नोबेल पुरस्कार विजेता वैज्ञानिक भी थे, उन्होंने उस विश्वास के खिलाफ एक परिपत्र में हस्ताक्षर किए थे। उनके वक्तव्य का सार मैं यहां नीचे दे रहा हूं:

> ...ऐसी कल्पना करना महज एक भूल है कि जन्म के समय ग्रह-नक्षत्रों के बल हमारे भविष्य को आकार दे सकते हैं। यह भी सच नहीं है कि सुदूर स्थित आकाशीय पिंड किसी कार्य विशेष के लिए किसी निश्चित तिथि या अवधि को अनुकूल बनाते हैं या जिस राशि में किसी का जन्म होता है, वह राशि अन्य व्यक्तियों के साथ उस व्यक्ति के मेल-बेमेल का निर्धारण करती है... वर्तमान अनिश्चितता भरे समय में अनेक लोग निर्णय लेने का सुगम रास्ता चाहते हैं। इसलिए वे ग्रह-नक्षत्रों द्वारा पूर्वनिर्धारित भाग्य में भरोसा करने लगते हैं, जिन पर उनका कोई नियंत्रण नहीं है। फिर भी हम सभी को दुनिया का सामना करना चाहिए और हमें इस बात को भी समझना चाहिए कि हम अपना भविष्य आप बना सकते हैं, उसे तारे नहीं बनाते।
>
> *(द ह्यूमनिस्ट,* सितंबर/अक्टूबर 1975)

क्या ग्रह मनुष्य के भाग्य को प्रभावित करते हैं? इस सवाल का जवाब 'हां' में होना ही ज्योतिष का आधार है। 'हां' के इस जवाब की अवधारणा की जांच एक वैज्ञानिक कैसे कर सकता है? किसी व्यक्ति द्वारा केवल जन्म कुंडली पर आधारित भविष्यवाणी से वह संतुष्ट नहीं होगा। उसे सर्वप्रथम भलीभांति परिभाषित नियमों की दरकार होगी, जिन पर ये अनुमान आधारित हैं। वे नियम स्पष्ट होने चाहिए ताकि अलग-अलग व्यक्ति उसी जन्म कुंडली के आधार पर एक ही तरह की भविष्यवाणी कर सकें। फिर उसे इस बात के लिए भी तैयार रहना होगा कि इन भविष्यवाणियों के केवल संयोग से सही होने की संभावना के पीछे कोई सांख्यिकीय प्रविधि पर आधारित नियम कार्य नहीं कर रहा है। इसके लिए उसे विभिन्न दशाओं के अंतर्गत बड़ी संख्या में ऐसी ही जांच पड़ताल के व्यवस्थित अध्ययन की आवश्यकता पड़ेगी।

इसलिए यह आवश्यक है कि इस भविष्यवाणी को इस तरह प्रस्तुत किया जाए कि इसे परखा जा सके। अब वैज्ञानिकों द्वारा जो परीक्षण किए गए हैं, उनके नतीजे नकारात्मक ही मिले हैं। लेकिन, हमेशा यह भी आवश्यक नहीं है कि ऐसी पड़ताल करने के लिए किसी व्यावसायिक वैज्ञानिक की ही सहायता ली जाए। एक शिक्षित आम आदमी भी प्रमाणों की जांच कर सकता है, बशर्ते कि उसका दृष्टिकोण वस्तुनिष्ठ होना चाहिए। मैं हाल ही में ज्योतिष के वैज्ञानिक पूर्वानुमान को परखने के लिए भारत में किए गए ऐसे ही प्रयोगों का उदाहरण देना चाहता हूं।

इस पड़ताल के लिए मैं अंधश्रद्धा-निर्मूलन समिति से जुड़ा था जिसके प्रमुख थे, डॉ. नरेन्द्र दाभोलकर, प्रकाश घटपांडे (जो पहले ज्योतिषी थे लेकिन अब ज्योतिष के आलोचक बन गए हैं) और सांख्यिकीय विभाग, पुणे विश्वविद्यालय के सुधाकर कुंटे। यह परीक्षण सामान्य प्रकार का था और ज्योतिष की आम बातों से कुछ हट कर था। इसके लिए 200 बच्चों से संबंधित तिथियों, समय और स्थान की जानकारी एकत्र की गई ताकि उनकी जन्म कुंडली बनाई जा सके। उन 200 में से आधे (100) बच्चे प्रतिभाशाली थे जबकि शेष आधे मंद बुद्धि थे। प्रयोग में बिना किसी क्रम के यों ही चुनी गई 40 जन्मकुंडलियों के अनेक सेट बनाए गए। इस प्रकार किसी भी सेट में प्रतिभाशाली बच्चों की N जन्मकुंडलियां और मानसिक रूप से विकलांग बच्चों की 40-N जन्मकुंडलियां होंगी। इसके बाद हमने इस प्रयोग में भाग लेने के लिए ज्योतिषियों को बुलाया। उनमें से 51 सहमत हुए जबकि अधिकतर ज्योतिषी संगठनों ने इस जांच का बॉयकाट किया क्योंकि उन्हें इसमें फंसने का अंदेशा हुआ। प्रत्येक प्रतिभागी को जन्म कुंडलियों का एक सेट भेजा गया। उनसे प्रत्येक जन्मकुंडली को प्रतिभाशाली बच्चों के वर्ग-I अथवा मानसिक विकलांगों के वर्ग-II लेबल करने को कहा गया। यद्यपि हमारे रिकार्ड में समस्त सूचनाएं दर्ज थीं परंतु न तो हमें और न ही प्रतिभागी को सेट के N का पता था। जांच से पहले ही हमारे सांख्यिकीविद् ने यह घोषणा कर दी थी कि पूर्वानुमान की क्षमता साबित करने के लिए ज्योतिषियों के 40 में से 28 लेबल ठीक होने चाहिए। 51 में से महज 27 ज्योतिषियों ने प्रत्युत्तर दिए और उनके पूर्वनुमान की सफलता का औसत 40 में से 17 था। अगर वे सिक्का उछाल कर चित और पट वाला तरीका अपनाते तो उन्हें कहीं ज्यादा सफलता मिलती! इसके अतिरिक्त इस परीक्षण में एक व्यावसायिक ज्योतिषियों के संगठन ने भी भाग लिया। संगठन को हमने सभी 200 जन्मकुंडलियां दीं। उनके 102 लेबल सही सिद्ध हुए। सांख्यिकी की दृष्टि से यह भी 50-50 का संयोग था। स्पष्टतः इस जांच से पता चला कि ऐसे मामलों में ज्योतिषीय पूर्वानुमान की क्षमता का दरअसल कोई अर्थ नहीं है।

मैं अमेरिका और यूरोप के कई और उदाहरण दे सकता हूं जिनमें अनेक शोधकर्ताओं ने अनेक अवसरों पर ज्यातिष को विज्ञान की कसौटी पर कसा और उसमें कमियां पाईं।

परंपराओं का विरोध

व्यक्ति रूप में या एक बड़े समूह के हिस्से के रूप में मनुष्य हमेशा किसी न किसी परंपरागत विश्वास के साथ जीता रहा है। ये विश्वास उसकी सांस्कृतिक और धार्मिक विरासत से अभिन्न रूप से जुड़े हुए हैं। जब कभी मनोवृत्ति के आधार पर इन विश्वासों की आलोचना की जाती है तो विरोध जन्म लेता है। कई बार विरोध इसलिए होता है कि उन विश्वासों या रीति-रिवाजों के पीछे कभी एक तार्किक आधार था, परंतु आज वे आधार तर्क की कसौटी पर खरे नहीं उतरते। सदियों पहले सामाजिक परिवेश में कुछ रीति-रिवाजों का कोई सांकेतिक या व्यावहारिक अर्थ था, लेकिन आज वे अप्रासंगिक हो गए हैं। सवाल उठता है कि इस प्रकार का विरोध उत्पन्न होने की दशा में क्या करना चाहिए?

परंपरा के अनुसार हर व्यक्ति की समाज के प्रति जिम्मेदारी है और अपने सभी सदस्यों की खुशहाली की प्रतिबद्धता समाज की है। चारों ओर से प्राकृतिक वातावरण की रक्षा करना व्यक्तिगत तथा सामाजिक प्रतिबद्धता है। इन गुणों से संपन्न मनुष्य यह अंदाज़ा लगा सकता है कि विज्ञान को क्या करना है: क्या स्वीकारना है और क्या नकारना है, इसका न्यायसंगत निर्णय वह ले सकता है। बस, समाज की समग्र रूप में मदद करने के लिए वैज्ञानिक मनोवृति की यहीं जरूरत पड़ती है।

तकनीकी रूप से विकसित पश्चिमी राष्ट्र समाज पर विज्ञान और प्रौद्योगिकी के अनियंत्रित बुरे प्रभावों को झेल रहे हैं। विनाशकारी नाभिकीय शस्त्रागार, अतिशय औद्योगिक प्रदूषण, आटोमेशन से पैदा हुई बेकारी और उसके बाद मशीनीकरण से उत्पन्न हुई मनोवैज्ञानिक समस्याएं आदि इसके उदाहरण हैं। तो, क्या इसका मतलब यह है कि समस्त वैज्ञानिक और तकनीकी विकास पर विराम लगा देना चाहिए? पूर्व में कुछ विकासशील राष्ट्रों के कुछ लोगों द्वारा इस प्रकार की प्रतिक्रिया की वकालत से एक भयानक प्रतिक्रिया सामने आई है। अतः ऊपर दिए गए मार्गदर्शक सिद्धांतों से तमाम विसंगतियों के बीच विवेकपूर्ण मार्ग चुनना संभव होना चाहिए।

वर्तमान स्थिति

संक्षेप में इसकी समीक्षा मुझे करने दीजिए कि हम भारतीय लोगों का नेहरु की इस अपेक्षा में क्या स्थान है :

> " केवल राजनैतिक और आर्थिक रूप से स्वतंत्र होने पर ही हमारा मस्तिष्क सामान्य और आलोचनात्मक रूप से कार्य करता है।"

निष्पक्ष सर्वेक्षण से एक मिली-जुली तस्वीर उभरती है।

एक ओर, जैसा कि मैंने पहले बताया, अनेक गैर सरकारी संगठन हैं जो तार्किकता का प्रसार और अंधविश्वासों का उन्मूलन कर रहे हैं। ऐसे संगठन हैं

जो वैज्ञानिक मनोवृत्ति पर व्याख्यानों, नुक्कड़-नाटकों, चमत्कारों की वैज्ञानिक व्याख्या, लेख और किताबों के द्वारा जन जागरुकता कार्यक्रम आयोजित करते हैं। नई दिल्ली में स्थित राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद (एन सी एस टी सी) इस प्रकार के कार्यक्रमों को रचनात्मक सहयोग प्रदान कर रही है।

एन सी एस टी सी ने 28 फरवरी को राष्ट्रीय विज्ञान दिवस के रूप में आयोजित करने की शुरुआत की। सन् 1928 में इसी दिन सी. वी. रामन ने वह खोज की थी जिसके लिए उन्हें भौतिकी का नोबेल पुरस्कार दिया गया। इस दिन, बल्कि पूरे सप्ताह, जिसमें यह तिथि आती है, पूरे देश में वैज्ञानिक संकल्पनाओं और वैज्ञानिक दृष्टिकोण पर केंद्रित अनेक जन-जागरुकता कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है। वैज्ञानिक संस्थान दृश्य-श्रव्य माध्यमों, प्रदर्शनियों और व्याख्यानों आदि के द्वारा आम जनता को वैज्ञानिक जानकारी देते हैं। कुछ संस्थान स्कूली बच्चों के लिए विशेष क्विज कार्यक्रम और प्रतियोगिताएं आयोजित करते हैं।

इस प्रकार के अनेक प्रयत्न व्यवस्थित ढंग से सरकार अथवा अन्य संस्थाओं द्वारा किए जाते हैं। इसके बावजूद आम आदमी की सोच क्या है? क्या हम आत्मविश्वास के साथ यह स्वीकार कर सकते हैं कि आजादी से लेकर बीती आधी शताब्दी में हमने अंधविश्वासों की सदियों से लगातार मोटी होती दीवार को ढहाने में कोई विशेष कामयाबी हासिल की है? उदाहरण के तौर पर, हम महान समाज सुधारक राजा राम मोहन राय और सती प्रथा के खिलाफ उनकी लड़ाई को याद कर सकते हैं। लेकिन, अब भी इक्का-दुक्का ये प्रथाएं समाज में घटती रहती हैं और इनमें आस्था रखने वालों को अपनी ओर आकर्षित करती हैं।

अंधविश्वास केवल गांवों में ही व्याप्त नहीं हैं। गणेश भगवान की प्रतिमा के दूध पीने की घटना ने दिल्ली, मुंबई और भारत के अन्य शहरों में भारी भीड़ जमा कर दी थी। इनमें कुछ मंत्री भी अपना आश्चर्य और आनंद व्यक्त कर रहे थे। ज्ञात विज्ञान के आधार पर इस घटना को खारिज करने में ज्यादा वक्त नहीं लगा, परंतु लोगों के मन में बैठे अंधविश्वास ने यह भेद खोल दिया कि समाज पर विज्ञान और प्रौद्योगिकी की कलई वास्तव में बहुत हल्की चढ़ी है।

लेकिन, शायद अंधविश्वासों की बढ़ती प्रवृत्ति चिंता का बड़ा विषय है। इस प्रवृत्ति के कई उदाहरण दिए जा सकते हैं।

1. एक पीढ़ी पहले की तुलना में आज अधिकतर विवाह जन्मकुंडलियों को मिला कर तय किए जा रहे हैं। मैं ऐसे अभिभावकों को जानता हूं जिनका विवाह जन्मकुंडली मिलाकर नहीं हुआ, लेकिन उन्हीं के बच्चे अपने विवाह के लिए इसे जरूरी समझते हैं।
2. नई प्रौद्योगिकी के साथ, समाज में नए अंधविश्वास अपनी पैठ बना रहे हैं। इधर वास्तु शास्त्र और इसके चीनी संस्करण 'फेंग शुई' का प्रचलन बढ़ा है। प्रभावशाली राजनीतिज्ञ और समाज के नेता इस नई सनक के दीवाने हो चले हैं। इन मामलों का कोई भी दावा वैज्ञानिक कसौटी पर खरा नहीं उतरा है।
3. विज्ञान द्वारा तांत्रिकों के चमत्कारों को खारिज किए जाने के बावजूद, एक बड़ा वर्ग यहां तक कि शिक्षित शहरी वर्ग भी उन बाबाओं पर भरोसा करता जा रहा है जो चमत्कारों से मानवेतर शक्तियों के प्रदर्शन का ढोंग करते हैं। यह एक ऐसा क्षेत्र है, जिसमें खोजी विज्ञान पत्रकारिता अपना योगदान दे सकती है। इस दिशा में औसत सफलता दर्ज की गई है, पर और भी बहुत कुछ किया जा सकता है।
4. विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यू.जी.सी.) द्वारा ज्योतिष को विज्ञान के समान वैधता देना इस दुर्भाग्यपूर्ण प्रवृत्ति का एक और पहलू है। यू.जी.सी. ने 'वैदिक ज्योतिष' शब्द का प्रयोग किया मानो इस विषय की उत्पत्ति वेदों में हुई। लेकिन, सभी ऐतिहासिक प्रमाण यह बताते हैं कि जन्मकुंडली संबंधी ग्रहीय ज्योतिष विद्या पश्चिम यानी यूनान, बेबीलोन आदि से आई।

विज्ञान के चमत्कार सबके लिए लाभकारी

कोई भी आसानी से इस सूची को बड़ा आकार दे सकता है। आटोमेशन पर अत्यधिक निर्भरता ने समस्याएं खड़ी की हैं, प्रौद्योगिकी के अंधाधुंध उपयोग से प्रदूषण के खतरे पैदा हुए हैं, कुछ विशेष वैज्ञानिक क्षेत्रों में अनुसंधान से समाज के लिए गंभीर खतरे पैदा हो सकते हैं, परंतु इसका आशय यह नहीं है कि हम वैज्ञानिक मार्ग से हट जाएं और असंगत सिद्ध हो चुके वर्षों पुराने अंधविश्वासों को गले लगा लें।

दरअसल हमारे सामने खड़ी ये समस्याएं अगर अपराजेय नहीं तो विकट जरूर लगती हैं। पिछले कुछ दशकों में हुई उल्लेखनीय वैज्ञानिक प्रगति को देख कर ही पता लग जाता है कि सही दिशा में किए गए वैज्ञानिक प्रयास भविष्य की आशा संजोते हैं। मनुष्य की चंद्र यात्रा, मंगल पर अंतरिक्ष यानों का अवतरण और हमारे देश का 'साइट' कार्यक्रम जैसी अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी से जुड़ी उपलब्धियां, संचार के क्षेत्र में तीव्र प्रगति जिसने नाटकीय ढंग से दूरियों को नजदीकियों में बदल दिया है; चिकित्सा, जीव विज्ञान और कृषि के क्षेत्र में उन्नति क्या ये सब हमारी अपनी आंखों के सामने होने वाले वैज्ञानिक चमत्कार नहीं हैं जिन्हें हमने एक पीढ़ी से भी कम समय में हासिल किया है? स्वनामधन्य तांत्रिकों के तथाकथित चमत्कारों के बजाय विज्ञान के चमत्कारों का किसी एक व्यक्ति को नहीं वरन् पूरी मानवता को लाभ मिलता है। वे गरीब और अमीर दोनों को समान रूप से लाभ पहुंचाते हैं। विद्युत शक्ति के आविष्कार से न सिर्फ अमीरों की मशीनें चलती हैं बल्कि इससे सुदूर गांवों को रोशनी भी मिलती है।

विकसित राष्ट्रों ने इन तथ्यों को जान लिया है और वे न केवल सामान्य रूप से विज्ञान का समर्थन करते हैं बल्कि आधारभूत विज्ञान के अनुसंधान को भी प्रोत्साहित करते हैं जो शुरू में भले ही व्यर्थ जान पड़े, लेकिन उससे उपर्युक्त उदाहरणों जैसी उपयोगी उपलब्धियां हासिल हो सकती हैं। इस स्थिति में मौलिक अनुसंधान से मुंह मोड़ने का अर्थ है कि हमें विदेशों से नए विचारों का आयात करते रहना होगा। यह हमारी आत्म-निर्भरता की नीति के विपरीत है। आधारभूत अनुसंधान के लिए भारत के पास पर्याप्त प्रतिभाएं हैं, जिनमें से अधिकांश का उपयोग नहीं हुआ है। आधारभूत विज्ञान को समुचित बढ़ावा देकर इन प्रतिभाओं में सामने लाया जा सकेगा। इसका लाभ तुरंत नहीं तो आगे मिलेगा। अपने दृष्टिकोण को समझाने के लिए मैं एक सादृश्य उदाहरण दे सकता हूं। एक ऐसे देश की कल्पना कीजिए जिसके पास तेल का ऐसा भंडार है, वित्तीय कारणों से जिसका दोहन नहीं किया गया है। वह देश हमेशा विदेश से आयातित तेल पर निर्भर रहेगा। अंत में मैं कहना चाहता हूं, इसकी बड़ी संभावनाओं की तुलना में आधारभूत अनुसंधान के लिए भारी वित्तीय खर्चे की जरूरत नहीं पड़ती है। बस, हमें केवल यह सुनिश्चित करना होगा कि अनुसंधान उच्चकोटि का हो।

भगवान कृष्ण ने अर्जुन को *गीता* का प्रवचन देते हुए अंत में कहा: *"जो भी मैंने कहा है, उस पर पूरी तरह विचार करो और तब जो तुम चाहते हो वह करो।"* एक प्रकार से वैज्ञानिक मनोवृति भी हमें यह करने को कहती है: समस्त प्रमाणों का मूल्यांकन करके सर्वश्रेष्ठ का निर्णय करना। मुझे पूरा भरोसा है कि यदि हम परंपराओं के वशीभूत नहीं हैं तथा विज्ञान की चकाचौंध में भी नहीं खोए हैं और हमारी आंखें खुली हैं, दिमाग चौकन्ना है तो हमारा देश इस शताब्दी में तेजी से प्रगति के पथ पर अग्रसर होगा।

प्रो. जयंत विष्णु नार्लीकर सुप्रसिद्ध खगोल-भौतिकविद हैं और विज्ञान लोकप्रियकरण के लिए 'कलिंग पुरस्कार' से सम्मानित हो चुके हैं। वे अंतर-विश्वविद्यालय खगोल शास्त्र एवं खगोल भौतिकी केंद्र (आयुका) के पूर्व निदेशक भी हैं।

(अनुवाद : दीपक सिंह)